

## नकदी, उम्मीदवार और चुनावी अभियान Cash, Candidates, and Campaigns

माइकल कोलिनस  
Michael Collins  
July 28, 2014

दो माह पूर्व भारत में इतिहास की सबसे बड़ी लोकतांत्रिक घटना संपन्न हुई थी। 2014 का आम चुनाव पाँच सप्ताह की अवधि में नौ चरणों में संपन्न हुआ था, जिसमें 16 वीं लोकसभा के लिए 553.8 मिलियन मतदाताओं ने वोट डाले थे। इस चुनाव में *भारतीय जनता पार्टी* की प्रचंड विजय सुर्खियों में बनी रही और चुनाव पर हुए भारी खर्च के मामले से लोगों का ध्यान हट गया। एक अनुमान के अनुसार इस चुनाव में \$5 बिलियन डॉलर का खर्च आया, जिसमें से \$600 मिलियन डॉलर का खर्च तो सरकारी राजकोष से ही हुआ। हाल का यह चुनाव लोकतंत्र के इतिहास में सबसे महँगा चुनाव साबित हुआ।

चुनावी अभियान पर बढ़ते अभूतपूर्व खर्च के कारण चुनाव के दौरान "धनबल" की भूमिका पर रोक लगाने का काम भारतीय चुनाव के लिए बहुत ही कठिन साबित हुआ। पिछले पाँच वर्षों से आयोग निरंतर प्रयास करता रहा है कि उम्मीदवारों के चुनावी अभियान पर व्यक्तिगत तौर पर किये गये खर्च की निगरानी की जाए और उस पर नियंत्रण रखा जाए। इन सुधारों की एक झलक मुझे तब दिखाई दी जब मैं हाल ही के चुनावी अभियान के दौरान एक संसदीय उम्मीदवार के पीछे-पीछे घूमता रहा। निगरानी के बेहद कठोर उपायों के कारण उम्मीदवार भी विवश होकर इन नियमों से बचने के लिए नई-नई तकनीक विकसित करने या फिर जब भी मौका मिला, इन नियमों की खामियों का लाभ उठाने की कोशिश में जुटे रहे। जहाँ एक ओर आयोग के प्रयासों के कारण उम्मीदवार खुलकर खर्च करने से बाज आ रहे थे, वहीं चुनावी अभियान के लिए राजनैतिक दलों की निधियों के खर्च को सीमित करने में आयोग के प्रयास उतने सफल नहीं रहे और यही कारण है कि भारी खर्च के मूल स्रोत पर आयोग की अनदेखी होती रही।

### उम्मीदवारों पर निगरानी

चुनाव आयोग काले धन को जब्त करने और चुनावी खर्च पर निगरानी रखने के लिए हर तरह के उपाय अपनाता रहा है। चुनावी मौसम के दौरान मीडिया भी अक्सर उड़न दस्तों द्वारा पकड़े गये नकदी के बंडलों, शराब की बोतलों और मतदाताओं को लुभाने के लिए दिये जाने वाले उपहारों की तस्वीरों को कवर करता रहा है और यात्री भी राजमार्गों पर उड़न दस्तों द्वारा अचानक रोककर तलाशी लिये जाने की प्रक्रिया के साक्षी रहे हैं। इन्हीं उपायों से हाल के इस चुनाव में बिना कागज़-पत्र वाली लगभग ₹300 करोड़ रुपये की नकदी पकड़ी गई। हाल ही में आयोग ने उम्मीदवारों द्वारा खर्च की जाने वाली राशि की सीमा भी बढ़ाकर ₹70 लाख (\$116,000 डॉलर) रुपये कर दी है जबकि इससे पहले भी अधिकांश संसदीय चुनावी अभियानों में इतना ही खर्च किया जाता रहा है

वर्तमान नियमों के अनुसार उम्मीदवारों के लिए आवश्यक है कि वे बैंक में अलग से अपना खाता खोलें और अभियान से संबंधित सारे खर्च को समेकित करें और इस खर्च में उनके नाम पर प्रचार करने वाले गठबंधन के सहयोगियों और पार्टी के कार्यकर्ताओं द्वारा किये गये खर्च को भी शामिल करें। नामांकन संबंधी कागज़-पत्र जमा करने के बाद आयोग उम्मीदवारों को जिला-विशेष का एक रेट कार्ड देता है जिसमें निजी प्लास्टिक कुर्सियों, पार्टी के झंडों और डिजिटल बैनरों से लेकर वाहनों और किराये पर लिये गये लाउडस्पीकरों आदि के सामान्य खर्चों का हिसाब रहता है। घोषित और वास्तविक खर्चों के बीच के अंतर

की निगरानी करने के लिए आयोग चुनावी अभियान की हर गतिविधि पर हमेशा अपनी नज़र रखता है और नियमित रूप में सार्वजनिक रैलियों और जुलूसों की वीडियो रिकॉर्डिंग भी करवाता है। निगरानी दल सकल खर्च के मूल्यांकन के लिए वीडियो फूटेज को खँगालता है और मदवार उसका मिलान व्यापक सूची से करता है और फिर प्रत्येक उम्मीदवार के लिए रखे जाने वाले शैडो रजिस्टर में इन खर्चों को रिकॉर्ड करता है।

तमिलनाडु में एक चुनावी अभियान के दौरान ऑटो रिक्शों पर लगे पार्टी के झंडों और पीए सिस्टम से लैस एक शानदार जुलूस निकल रहा था, जिसके पीछे शहर की संकरी, टेढ़ी-मेढ़ी और भीड़-भरी गलियों से होते हुए स्पोर्ट्स कारों और मोटर साइकिलों का एक लंबा काफिला गुज़र रहा था। उसी दिन आयोग ने वीडियो फूटेज को खँगालकर इस रैली का खर्च ₹2 लाख रुपये तक आँका। कुछ सप्ताह के बाद वीडियो की निगरानी के नतीजे सामने आने लगे और उम्मीदवार कानूनी सीमा से बढ़ते जा रहे अपने घोषित खर्च को कम करने के लिए स्पोर्ट्स कारों को अपने काफिले में शामिल करने से बचने लगा। यद्यपि बड़ी पार्टियों के खर्च का कम से कम अनुमान भी करोड़ों रुपये तक जाता है, लेकिन जगह-जगह वीडियो निगरानी टीम की मौजूदगी के कारण वे खर्च तो घटने लगे हैं जो आम तौर पर सार्वजनिक कार्यक्रमों में जानबूझकर कम बताये जाते थे।

### **नियमों की अनदेखी**

जहाँ एक ओर वीडियो की निगरानी से सार्वजनिक रैलियों के खर्चों को कम बताने की प्रवृत्ति पर रोक लगी है, वहीं चुनावी अभियान के रोज़मर्रे के आम खर्चों में आसानी-से हेराफ़ेरी की जा सकती है। उदाहरण के लिए आयोग आधिकारिक तौर पर तो उम्मीदवार के खर्च का हिसाब तभी रखना शुरू करता है जब उम्मीदवार नामांकन पत्र भरता है, लेकिन उसका खर्चा तो नामांकन पत्र भरने से पहले ही शुरू हो जाता है। इसी तरह विज्ञापन छपवाने का मामला भी होता है। चुनावी अभियान के एक कार्यकर्ता के अनुसार, “अगर नोटिस के बैच की सही तौर पर घोषणा कर दी जाए तो उम्मीदवार की ₹70 लाख रुपये की सीमा का अधिकांश खर्चा तो इसी अकेली मद पर ही निकल जाए.” वस्तुतः हज़ारों या लाखों में छापे जाने वाले बैच को घोषित करते समय औपचारिक रूप में तो एक हज़ार या पाँच सौ ही बताया जाता है। एक दूसरे मौके पर पार्टी के एक संकोची कार्यकर्ता ने मुझे बताया कि यद्यपि आयोग के जाँच-बिंदुओं में मोटर गाड़ियों को रस्मी तौर पर रोककर तलाशी लेने की प्रक्रिया रहती है और कभी-कभी तो साइड-डोर पैनल को भी खोलकर देखा जाता है, लेकिन आम तौर पर सर्च पॉकेट पर नज़र नहीं जाती, जिसके कारण ₹1000 के नोट वाले चार लाख रुपये तक छिपाकर ले जाए जा सकते हैं।

रोज़मर्रे के ऐसे उल्लंघनों के अलावा उम्मीदवार चुनावी अभियान के दौरान वित्तीय नियमों की खामियों का लाभ उठाते हुए आयोग से एक कदम आगे ही चलता है। हाल के वर्षों में चुनावी अभियान केवल सार्वजनिक रैलियों और जुलूस तक ही सीमित नहीं रह गये हैं और असल में तो वर्तमान नियमों की सीमाओं के भी पार पहुँच गए हैं। हाल के चुनाव में चुनावी अभियान के लिए सोशल नेटवर्क और संदेश सेवा जैसे डिजिटल माध्यमों का अभूतपूर्व प्रयोग हुआ है। सच तो यह है कि पार्टियों के बेतहाशा चुनावी प्रचार के कारण मेरा सैलफ़ोन इतना जीवंत हो उठा था मानो सार्वजनिक ध्वनि संदेशों के माध्यम से उन्होंने एयरवेव पर हमला ही बोल दिया हो। डिजिटल प्रचार का माध्यम आयोग के लिए अभी-भी ऐसा अनजाना इलाका रह गया है जिसमें भारी निगरानी की बेहद ज़रूरत है और इस बात पर हैरानी की कोई बात नहीं है। जैसा कि एसोसिएटेड चैम्बर्स ऑफ़ कॉमर्स ऐंड इंडस्ट्री ऑफ़ इंडिया ने अनुमान लगाया है कि हाल के चुनाव में चुनावी खर्च में ₹500 करोड़ रुपये या लगभग \$100 मिलियन डॉलर की बढ़ोतरी हुई है।

चुनावी अभियान पर सीधी नज़र रखने से जो तथ्य हमारे सामने आए हैं उसमें ऐसे कितने ही उदाहरण हैं जिनसे पता चलता है कि इन अभियानों में किस तरह से खर्च से संबंधित नियमों की खामियों का लाभ लाभ उठाया जाता है. इन तमाम उल्लंघनों के होते हुए भी कुल खर्च में कोई कमी नहीं आई है और हाल के चुनाव का खर्च \$5 बिलियन डॉलर के प्राइस टैग तक पहुँच गया है. हाल ही में वीडियो के माध्यम से निगरानी जैसी पहल से खुले ढंग से उम्मीदवार के खर्च पर तो बंदिश लगी है, लेकिन जब तक राजनैतिक पार्टियों पर भी इसी तरह की कोई बंदिश नहीं लगाई जाती तब तक कोई विशेष लाभ नहीं होगा. अपनी बैलेंस शीट को साफ़-सुथरा बनाये रखने के लिए चुनावी अभियान के खर्च को उत्तरोत्तर ( कानूनी ढंग से) पार्टी के खजाने में डाल दिया जाता है जिसके कुल खर्च पर कोई रोक-टोक नहीं है.

### **चुनावी अभियान के खर्चों को फिर से चैनलाइज़ करना**

चुनाव आयोग चुनावी अभियान के विधिसंगत खर्च को दो भागों में विभाजित करता है, उम्मीदवार का खर्च या पार्टी का खर्च. अधिकांश संसदीय चुनाव क्षेत्रों में उम्मीदवार के खर्च की सीमा ₹70 लाख रुपये तय की गई है, लेकिन पार्टी खर्च की कोई सीमा नहीं है. उम्मीदवार कम मूल्यांकन करके, नियमों की खामियों के कारण और चुनावी अभियान की लागत को कानूनी सीमा से कम घोषित करके लाखों ही नहीं करोड़ों रुपये के खर्च को छिपा लेते हैं. चुनाव आयोग की रिकॉर्डेड निगरानी के बावजूद कानूनी सीमा को लागू कर पाना निरंतर कठिन होता जा रहा है. खर्च के विवरण को कानूनी सीमा के अंदर ही बनाये रखने के लिए अधिक से अधिकतर खर्च को राजनैतिक पार्टियों के माध्यम से ही दिखाने की प्रवृत्ति लगातार बढ़ती जा रही है. आयोग उम्मीदवार और पार्टी के आम चुनावी प्रचार की कार्यविधि में अंतर करता है. उदाहरण के लिए भले ही उम्मीदवार सार्वजनिक रैली के मंच पर प्रमुखता से बैठा हुआ हो, लेकिन जब तक उसका नाम, चुनाव क्षेत्र और फ़ोटोग्राफ़ प्रदर्शित नहीं होगा, राजनैतिक पार्टी उस रैली का सारा खर्च उठाएगी.

इस चुनावी अभियान के दौरान नियम संबंधी यह खामी स्पष्ट रूप में दिखाई पड़ रही थी. उदाहरण के लिए जब किसी बड़ी पार्टी का बड़ा नेता ₹10 करोड़ रुपये खर्च करके कोई बड़ी रैली आयोजित करता है जिसमें बंदनवार और आसमान को छूते हुए विशालकाय कट आउट लगे होते हैं लेकिन उस पर उम्मीदवार का नाम और चुनाव क्षेत्र का उल्लेख नहीं होता तो इतनी बड़ी रकम का कोई भी उल्लेख उम्मीदवार के खाते में नहीं किया जाता. जैसे-जैसे उम्मीदवार के खर्च की निगरानी और जाँच का दायरा बढ़ा होता जा रहा है, चुनावी अभियान के खर्चों को पार्टी के खाते में अंतरित किया जाने लगा है जिस पर सख्ती से कोई नियंत्रण नहीं रखा जाता. विडंबना यह है कि इसके कारण उम्मीदवार की अपने ही चुनावी अभियान में सक्रिय भूमिका सीमित होती जा रही है और राजनीति अधिक से अधिक व्यक्ति-सापेक्ष या स्टार केंद्रित होती जा रही है, जिसमें पार्टी के बॉस के साथ-साथ ए श्रेणी के ही नामी लोग मौजूद होते हैं और यह सारा खर्च पार्टी के खाते में चला जाता है. पार्टी फंड पर इसी निर्भरता के कारण मैदान में बराबरी का खेल नहीं हो पाता और पैसे वाली पार्टियाँ गठबंधन राजनीति पर हावी रहती हैं.

उम्मीदवारों और चुनाव आयोग के बीच का झगड़ा तो हमेशा ही रहता है, लेकिन यह मात्र चूहे-बिल्ली का खेल नहीं रह जाता, जिसमें चतुर राजनीतिज्ञ परेशानी से घिरे चुनाव के आयोजक दल से एक कदम आगे ही रहते हैं. उम्मीदवार मात्र नियमों की अवहेलना ही नहीं करते, बल्कि नियमों की खामियों के बीच ही अपना खेल खेलते हैं. ये चुनावी अभियान प्रकट रूप में उम्मीदवार के चयन के लिए ही होते हैं और उसके खर्च पर रोक लगा दी जाती है जबकि राजनैतिक पार्टियों को खुली छूट रहती है. यही कारण है कि

उम्मीदवारों की अनदेखी होने लगती है और भारी खर्च के मुख्य स्रोत को कोई हाथ भी नहीं लगा पाता. जैसे ही राजनैतिक खर्च पर रोक लगाने की बात होगी पूरे राजनैतिक हलके में तहलका मच जाएगा. पार्टी फंड से चुनावी अभियान के खर्च को चलाना ही अपने-आपमें निष्पक्ष चुनाव में सबसे बड़ी बाधा है. भारत के बढ़ते लोकतांत्रिक दायरे में छोटी-छोटी पार्टियों की संख्या बढ़ने की भविष्यवाणी से जो शोर-शराबा होगा, उसकी तो चर्चा का भी कोई मतलब नहीं है.

*माइकल कोलिन्स पेन्सिल्वेनिया विश्वविद्यालय के दक्षिण एशिया अध्ययन विभाग में डॉक्टरेट के प्रत्याशी हैं.*

हिंदी अनुवाद: विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा), रेल मंत्रालय, भारत सरकार

< malhotravk@gmail.com > मोबाइल: 91+9910029919